देवियों का उद्धारक स्वरूप

नवरात्रे आते ही माता (देवी) के भक्तों के हृदय में प्रेम तथा श्रद्धा की तरंगें उठने लगती हैं। भारत का हर गली-मोहल्ला रात्रि-जागरण के द्वारा माँ की महिमा से गूँज उठता है। जो लोग सार्वजनिक अनुष्ठान में शाामिल नहीं हो पाते वे घर में ही अष्ट शक्तिधारी माँ की मूर्ति रख उसकी पूजा-अर्चना कर उसमें ध्यानमग्न रहने की कोशिश करते हैं। चित्रकार, मूर्तिकार भी माँ का रूप ऐसा बनाते हैं कि बस देखने वाला देखता ही रह जाए, नज़रें हटें ही नहीं। चित्रकार के बनावटी रंग ऐसा सजीव आकर्षण पैदा कर सकते हैं तो जब माँ चेतन रूप में धरा पर अवतरित हुई होंगी तो कितनी मनमोहक रही होंगी, सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है।

ऐसे तो माँ के अनेक रूप, अनेक प्रकार के चित्रों में चित्रित होते हैं परंतु भक्तों को सर्वाधिक प्रिय है उनका अष्टभुजाधारी रूप। इस रूप में वे असाधारण शक्ति की धनी परिलक्षित होती हैं। इनके सभी हाथों में अलग-अलग प्रकार के शस्त्र जैसे कि धनुष, तलवार, कटार, भाला, गदा आदि दिखाए जाते हैं। भिन्न-भिन्न प्रकार के इन शस्त्रों को देखकर मन श्रद्धा से नतमस्तक तो होता है परंतु साथ ही यह भी कह उठता है कि ये कोई संहारक शस्त्र नहीं वरन् विश्वकल्याण के लिए सिद्ध की गई कई प्रकार की अलौकिक शक्तियाँ हैं, जो सूक्ष्म होने के कारण हथियारों के रूप में चित्रित कर दी गई हैं। आइये, इस विषय में थोड़ा गहन चिन्तन करें।

एक बार में
एक शस्त्र

ज्ञात इतिहास में जितने भी योद्धा हुए हैं, उनके नाम के साथ-साथ उनके द्वारा उपयोग में लाया जाने वाला शस्त्र भी समान महिमा का पात्र बनता है। जैसे वीर शिवाजी की खड्ग, महाराणा प्रताप का भाला, रानी लक्ष्मी बाई की तलवार और गुरु गोविन्द जी की भी तलवार की बड़ी महिमा है। इन महावीरों ने अपने एक ही शस्त्र को साधा और उसी के बल से विजय भी पाई। ज्ञात इतिहास से पूर्व अर्थात् पौराणिक कथाओं (ईश्वरीय कर्त्तव्य की यादगार कथाएं) के योद्धाओं में भी जैसे महाभारत के पात्र, रामायण के पात्र, युद्ध में केवल एक ही शस्त्र का प्रयोग करते दिखाए गए हैं (मायावी शक्तियों की बात अलग है)। एक साथ कई स्थूल शस्त्रों का प्रयोग तो कहीं भी, किसी के द्वारा नहीं हुआ। अर्जुन सर्वश्रेष्ठ धनुर्धारी, भीम सर्वश्रेष्ठ गदाधारी, श्री राम को सफल धनुर्धारी और श्री कृष्ण का स्वदर्शन चक्र प्रसिद्ध है। यह बात अवश्य है कि शस्त्र विद्या सिखाने वाले गुरु में सभी प्रकार के शस्त्र संचालन का केवल ज्ञान होता है परंतु व्यवहारिक रूप में यदि गुरु भी युद्ध में उतरता है तो केवल एक ही शस्त्र के साथ। अनेक शस्त्रों का ज्ञान होते भी वह एक साथ सारे शस्त्रों का संचालन नहीं कर सकता है। अब यदि देवियों ने भी असुरों से हिंसक युद्ध किया होता तो उस देवी को भी किसी एक शस्त्र के ज्ञान में निपुण दिखाया जाता, उसको उसी शस्त्र के साथ चित्रित किया जाता। उस शस्त्र की महिमा भी गाई जाती। देवी ने किस

गुरु से शस्त्र विद्या सीखी उसका भी उल्लेख होता। जैसे कि पुराणों में श्री राम, श्री कृष्ण के गुरु का उल्लेख है, शस्त्र विद्या सीखने के समय का उल्लेख है परंतु देवियों के संबंध में गुरु और शिक्षा, दीक्षा आदि का कोई उल्लेख नहीं है। तो स्पष्ट है कि देवी के हाथ में एक साथ इतने हथियार उसकी हिंसक नहीं, संहारक नहीं वरन् उद्धारक शक्ति, आध्यात्मिक शक्ति के प्रतीक हैं। दुर्गा के साथ शक्ति को, लक्ष्मी के साथ धन को और सरस्वती के साथ विद्या को जोड़कर हमने इनके संहारक नहीं वरन् उद्धारक और दाता रूप को उजागर किया है। अधिकतर जब देवी के दो हाथ चित्रित किए जाते हैं तो उनमें संहारक शस्त्र न होकर कमल का फूल या वरदानी हाथ या सिमरणी को जपता हुआ हाथ दिखाते हैं।

अनेक शस्त्र, अनेक आध्यात्मिक शक्तियों के प्रतीक

भारत के ज्ञात इतिहास में बहुत कम महिलाएँ युद्ध के मैदान में उतरी हैं। आधुनिक युग में रानी लक्ष्मी बाई का नाम विशेष उल्लेखनीय है। पौराणिक कथाओं में गृहस्थ देवताओं की पत्नियों ने पीछे होकर सहयोग दिया परंतु सामने खड़े होकर युद्ध कभी नहीं किया। नारी को तो वैसे भी आत्मिक बल की धनी माना जाता है न कि शारीरिक बल की। **शारीरिक बल को तो पशुबल माना जाता है। जैसे हाथी एवं शेर में शारीरिक बल बहुत होता है परंतु मानव बौद्धिक बल से उन्हें वश कर लेता है। शारीरिक बल से यदि व्यक्ति शेर या हाथी का सामना करे तो एक-एक से करना पड़े परंतु बौद्धिक बल से वह एक साथ कइयों को बंदी बना सकता है। तो जैसे पशु से मनुष्य बौद्धिक बल में आगे है उसी प्रकार देवियाँ भी आध्यात्मिक बल में मनुष्यों और असुरों से श्रेष्ठ हैं। यदि वे एक साथ लाखों-करोड़ों असुरों को भस्म करती, नष्ट करती दिखाई गई हैं तो यह उनकी आत्मिक शक्ति, आध्यात्मिक शक्ति है। आध्यात्मिक शक्तियाँ कई प्रकार की होती हैं इसलिए उन भिन्न शक्तियों को प्रत्यक्ष करने के लिए, एक ही प्रकार का शस्त्र दिखाना उचित नहीं। यदि हिंसक युद्ध हो तो एक शस्त्र साधा जाता है परंतु आध्यात्मिक शक्तियाँ, सूक्ष्म शक्तियाँ कई प्रकार की होने के कारण उन्हें दिखाने के लिए अलग-अलग शस्त्र दिखाने पड़े। शक्ति को दिखाने के लिए हथियारों को ही उचित प्रतीक माना गया, इससे भ्रांति निर्मित हो गई कि शायद देवियाँ हिंसक हैं।**

निर्माण के लिए कई औज़ार चाहिएं

वैसे भी आप देखिए, जब संहार करना हो, नष्ट करना हो, तोड़-फोड़ करनी हो तो एक ही हथियार काफी होता है। मान लो, किसी की गर्दन काटनी हो तो एक तलवार या एक बंदूक काफी है परंतु हताहत व्यक्ति का उद्धार करना हो, इलाज करना हो तो डॉक्टर और नर्स को सैकड़ों प्रकार के औज़ारों की ज़रूरत पड़ती है। इसलिए डाकू एक ही हथियार रखता पर डॉक्टर तो छोटे-बड़े कई प्रकार के औज़ार रखता है। कपड़ा फाड़ना हो तो हाथ ही काफी हैं पर सिलाई के लिए छोटे-छोटे कितने पुर्ज़ों वाली मशीन, धागा, सूई आदि बहुत कुछ चाहिए। दीवार तोड़ने में एक औज़ार - हथौड़ा काफी है पर उसी दीवार को बनाने के लिए कई प्रकार के साधन चाहिएं। कहने का भाव यह है कि देवियों के कई हाथ उनकी निर्माणकारी शक्ति, उद्धारक शक्ति के प्रतीक हैं। इन शक्तियों में मुख्य आठ शक्तियाँ हैं इसलिए अधिकतर आठ हाथ दिखाते हैं। ये हैं – **सहन करने की शक्ति, समाने की शक्ति, परखने की शक्ति, निर्णय करने की शक्ति, सामना करने की शक्ति, सहयोग देने की शक्ति, विस्तार को संकीर्ण करने की शक्ति, समेटने की शक्ति।**

विकारग्रस्त होना ही राक्षस होना है

असुर और देवताओं को एक ही पिता के पुत्र भाई-भाई दिखाया गया है। ऋषि कश्यप की दो पत्नियों में से दीति के पुत्र राक्षस और अदिति के पुत्र देवता दिखाए गए हैं। पांडव, कौरव भी भाई-भाई की संतान दिखाए गए हैं। पांडवों में दैवीगुण, कौरवों में राक्षसी अवगुण दिखाए गए। राम का विरोध करने वाले, रावण, कुंभकरण के बारे में या विष्णु का विरोध करने वाले हिरण्यकश्यप और हिरण्याक्ष के बारे में भी कहा गया कि ये पहले देवता थे पर किसी भूल से शापग्रस्त हो राक्षस योनि में जन्मे। उपरोक्त बातों से सिद्ध होता है कि एक ही पिता, एक ही कुल के बच्चे, यदि श्रेष्ठ वृत्ति धारण करते हैं तो देवकुल के और यदि काम, क्रोध, लोभ के वशीभूत हो कुवृत्ति धारण करते हैं तो राक्षस कहलाते हैं। अत: नाखून, सींग, दाँत आदि तो प्रतीक मात्र हैं, भिन्नता केवल वृत्तियों की है। राक्षस योनि कोई अलग योनि नहीं, देववृत्तियों से भिन्न अर्थात् कुवृत्ति वाले परिवार या माहौल या संग में जन्म मिलना ही राक्षस योनि में जन्म मिलना है। प्रह्लाद को राक्षस पुत्र होते भी बिना सींग, दाँत के देव-तुल्य दिखाते हैं।

ये जो राक्षसी वृत्तियाँ, काम, क्रोध, लोभ हैं, इन्हें हथियारों से नहीं जीता जा सकता। मान लो काम विकार से ग्रसित व्यक्ति को हमने मारा तो मृत्यु तो केवल शरीर की हुई पर काम विकार के संस्कार को तो आत्मा साथ ले गई और अगले जन्म में काम विकार की वृत्ति पुन: उत्पात मचाने लगी तो ऐसा संहार किस काम का। संहार का निशाना तो कुवृत्ति होनी चाहिए थी, न कि शरीर। कुवृत्ति के संहार के लिए श्रेष्ठ वृत्तियाँ चाहिएँ जैसे कि कुदृष्टि या काम पिपासा का हनन, आत्मिक तेज, आत्मिक ज्ञान, आत्मिक दृष्टि से किया जा सकता है। इसके लिए ज्ञान-बल, योग-बल, पवित्रता-बल, करुणा-बल, कल्याण-बल की आवश्यकता है। देवियाँ इन सभी भिन्न-भिन्न बलों से सुसज्जित थीं। उन्हीं बलों को भिन्न-भिन्न आध्यात्मिक शक्तियों के रूप में दिखाया गया है।

आत्मतेज से सुसज्जित नारी ही शिवशक्ति है

कुवृत्तियों का नंगा नाच कलियुग के अंत में होता है। तब भगवान शिव, अपनी विश्वसनीय रचना नारी को ज्ञान, योग, गुण, शक्तियों के बल से लैस करके, उसे सिंहवाहिनी (प्रकृतिजीत), असुर संहारिणी (विकार जीत), कमलेन्द्रिय (मनजीत) बना देते हैं। इसलिए देवियों के त्योहार को नवरात्रि नाम दिया गया। यहाँ रात्रि कलियुग के घोर तमोगुण का प्रतीक है जिसमें देवियाँ विकारों को परास्त करती हैं और नव शब्द, नए युग का प्रतीक है। देवियों के इस विकार विजय के बाद युग बदलता है, सतयुग का आगमन होता है। पाप और विकार दो युगों के लिए पूरी तरह नष्ट हो जाते हैं। सृष्टि की संकट की घड़ी में भगवान शिव का साथ देने के कारण ही देवियाँ, शिव-शक्तियाँ कहलाईं और भगवान शिव को अर्धनारीश्वर नाम दिया गया। भगवान शिव के मार्गदर्शन से प्राप्त, नारी शक्ति के इसी उद्धारक रूप की पूजा हम नवरात्रों में करते हैं। पूजा करते-करते हम कलियुग के अंत में आ पहुँचे हैं। अब फिर भगवान शिव ने, कल्प पहले की तरह नारी को, आत्म तेज, ईश्वरीय तेज धारण करने का आह्वान किया है। जो इस आह्वान पर, अपने स्वरूप को दिव्यता से भर लेगी, मंदिरों में माता दाती के रूप में आधाकल्प तक उसका गायन-पूजन चलता रहेगा। अत: **हे नारी! मंदिर में पूज्य रूप में तुम ही विराजमान हो, अपने उस रूप को पहचान कर पुन: अष्ट शक्तिधारी बनो। अपने तथा दूसरे के भीतर छिपे विकारों का शमन करो, हनन करो।** ❑